Chhattisgarh TRTI
TRIBAL RESEARCH AND TRAINING INSTITUTE



उरांव जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन का मोनोग्राफ अध्ययन

आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान
नवा रायपुर अटल नगर, छत्तीसगढ़

शासकीय उपयोग हेतु

प्रतिवेदन क्रमांक : 10

Chhattisgarh TRTI
TRIBAL RESEARCH AND TRAINING INSTITUTE

उरांव जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन

निर्देशन
शम्मी आबिदी (आई.ए.एस.)
संचालक

मार्गदर्शन
डी. पी. नागेश
उप संचालक

संकलन एवं लेखन कार्य
श्रीकांत कसेर (सहायक संचालक)
निलेश कुमार सोनी (अनुसंधान सहायक)
जी.एल. बलेन्दर (अनुसंधान सहायक)

आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान



अनुक्रमणिका



अध्याय - 1 प्रस्तावना

भारत में विभिन्न संस्कृतियों के मुकाबले आदिवासी संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है। आदिवासी समुदाय के जन्मजात गुणधर्मो में सरलता, सहजता, सामुदायिकता, अपरिग्रहता, निश्छलता, बन्धुता, सच्चाई, ईमानदारी, परिश्रमशीलता, सामुहिकता, समानता व प्रकृति से घनिष्ठता की भावना विघमान है।

भारतीय समाज व्यवस्था से कथित मुख्य धारा से अलग–अलग दुर्गम जंगलो, बीहड़ वनों, प्रकृति की खुशनुमा गोद में हजारों वर्षो से मस्त मौला जीवन जीने वाले आदिवासीयों की अपनी अलग ही दुनिया है। मस्तमौला जीवन जीने वाले आदिवासी आधुनिक समाज की बाह्य संस्कृति से दूर रहकर आदिम सभ्यता को सुरक्षित रखने में सफल हैं। वास्तविक दुनिया के पल गुजारने पर उनकी भव्यता, दिव्यता व जीवतंता का अहसास होता है। उनका रहन–सहन, खान–पान, नृत्य, गीत–संगीत, पर्व–त्योहार, सामाजिक व्यवस्था, अर्थतंत्र, संस्कृति सब कुछ प्रकृति के साथ अद्भूत सामंजस्य से संचालित है।

औद्योगिकीकरण ने नगरीय मनोवृतियों को बढ़ाकर व्यक्तिवादिता तथा भौतिकता के प्रति आकर्षण पैदा करके आदिवासी समाज में जटिल समस्याओं को जन्म दिया है। आज आदिवासीयों का व्यक्तिगत, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक व सामुदायिक रूप से विघटन हो रहा है। आधुनिकीकरण और संस्कृतिकरण के चलते आदिवासी समुदाय अपनी अस्मिता को नष्ट होने से नहीं बचा पा रहें हैं। आदिवासीयों के जंगल, जमीन व बोली भाषा छीन लिये गये हैं। आदिवासीयों के धार्मिक विश्वास में धर्मान्तरण एक संवेदनशील मुद्दा है। आदिवासी क्षेत्रों के वृहद परियोजनाओं से उनका प्राकृतिक रहवास एवं संस्कृति नष्ट हो रही है। उनके विकास की योजनाएँ केवल कागजो में लग रही है।

संस्कृति :-

संस्कृति शब्द का अनेक अर्थ हैं संस्कृति शब्द प्रत्यक्ष रूप से संस्कार की ओर संकेत करता है। सामान्य समाज में शिष्ट मनुष्यों के साहित्य, सामाजिक, राजनितिक, आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक, कलात्मक विचारों व कार्यकलापों को संस्कृति में शामिल किया जाता है। संस्कृति वस्तुतः जीवन दर्शन है। अतः मानव समाज में संस्कृति का विशेष महत्व होता है। आदिवासी संस्कृति की अपनी विशिष्ट पहचान है। दुर्गम वनों, पर्वतो के मध्य सदियों से पल्लवित और पुष्पित व संरक्षित आदिवासी संस्कृति उनके व्यवहार (लोकाचार) को भारतीय संदर्भ में परखा जाये तो उसमें मानवीय मुल्यों का अटूट भंडार है। भारत की आदिवासी संस्कृति के भीतर जाति समानता, लिंग समानता, सहभागिता, सहयोगिता, समूहभावना व प्रकृति से

1

निकटस्थ संबंध है। समुह भावना आदिवासी समाज के जीवन सार है। आदिवासी जीवन व्यक्ति केन्द्रित नहीं समाज केन्द्रित रहा है। वह अकेला नहीं समूह में सोचता है। सामाजिक सांस्कृतिक क्रियाकलापों में उनकी समान भागीदारी रहती है। आदिवासीयों का दृष्टिकोण उपयोगितावादी तथा विचार धारा जीओ और जीने दो की पक्षपाती है। आदिवासीयों का क्षेत्र उनकी सामूहिक चेतना का विस्तार होता है। जिसका सामाजिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक महत्व है। आदिवासीयों का ज्ञान आध्यात्म व धर्म व्यवस्था भी प्रकृति से गहरे संबंधो पर आधारित है।

उरांव जनजाति छत्तीसगढ़ राज्य में सरगुजा संभाग के जिला जशपुर, बलरामपुर, कोरिया, सूरजपुर, सरगुजा एवं बिलासपुर संभाग के रायगढ़, बिलासपुर एवं कोरबा के दुर्गम वन, पहाड़ो, पठारी क्षेत्रों में निवास करते हैं। इनकी सर्वाधिक आबादी जशपुर जिले में निवास करती हैं। उरांव जनजाति की संस्कृति विरासत बहुत ही समृद्ध है। छत्तीसगढ़ जनजाति समाज में इनका अलग पहचान है, लेकिन समय के साथ–साथ अन्य समाज से मेल मिलाप, शिक्षा, आधुनिकता, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, नये–नये अविष्कारों के कारण सांस्कृतिक परिवर्तन दिखाई देने लगा है साथ ही इसाई मिशनरी से कुछ लोगो के प्रभावित होने के कारण उनकी सांस्कृतिक परिवर्तन हुआ है।

संस्कृतिकरण :-

संस्कृतिकरण की अवधारण को लाने का श्रेय डॉ. एम.एस. श्रीनिवासन को जाता है। इस अवधारण द्वारा अपने भारतीय जाति प्रथा की संरचना व संस्तरण में होने वाले परिवर्तनों को समझाने का प्रयास किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक Change in Modern India में लिखा है, ''**संस्कृतिकरण वह क्रिया है जिसके द्वारा कोई निम्न हिन्दू जाति या कोई जनजाति अथवा अन्य समूह किसी उच्च और द्विज जाति की दिशा में अपने रीति रिवाज, कर्मकाण्ड, विचारधारा और जीवन पद्धति बदलता हो**'' आम तौर पर ऐसे परिवर्तन के बाद वह जाति, स्थानीय समाज में परम्परागत रूप में जाति सोपान में जो स्थिति या स्थान उसे मिला हुआ है, उससे उचे स्थान का दावा करने लगती है। साधारणतः बहुत दिनों तक, और वास्तव में एक–दो पीढ़ियों तक, दावा आने के बाद उसे स्वीकृति मिलती है। अतः संस्कृतिकरण वह क्रिया है जिसके द्वारा निम्न जाति या समूह के लोग अपनी जाति व सामाजिक स्थिति को परिशुद्ध, परिमार्जित व उन्नत करने के उद्देश्य से उच्च जाति के आदर्शो, मूल्यों, विचारों, कृतियों तथा संस्कारों को गृहण कर लेते है।

परसंस्कृतिकरण :-

परसंस्कृतिकरण का आशय एक सामाजिक समूह से दूसरे सामाजिक समूह में सांस्कृतिक तत्वों का प्रसारण एवं स्थानांतरण। परसंस्कृतिकरण संस्कृति परिवर्तन की एक प्रक्रिया है, जो विभिन्न संस्कृतियों वाले समुदायों के बीच सम्पर्क के कारण प्रतिफलित होती है। परसंस्कृतिकरण के मामले में दोनों संस्कृतियां परस्पर प्रभावित होती है। क्योकि एक संस्कृति के गुण (लक्षण) दूसरे संस्कृति में प्रविष्ठ हो जाते है।

अध्ययन प्रविधि :- उरांव जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन का अध्ययन सरगुजा जिले के पड़हा व्यवस्था के पदाधिकारीयों व बलरामपुर के उरांव जनजाति निवासरत विभिन्न ग्रामों के सामाजिकजनो जनो, से सामूहिक परिचर्चा तथा अवलोकन व फोटोग्राफी कर अध्ययन प्रतिवेदन तैयार किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. छत्तीसगढ़ में निवासरत उरांव जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन का मोनोग्राफ अध्ययन एवं संक्षिप्त अध्ययन करना।
2. उरांव जनजाति के भौतिक जीवन, आर्थिक जीवन, सामाजिक जीवन, राजनैतिक जीवन, धार्मिक जीवन, लोकपरंपराएँ में हुए सांस्कृतिक परिवर्तन का अध्ययन करना।

अध्ययन के महत्व :- उरांव जनजाति में हुए सांस्कृतिक परिवर्तन को जानने में सहायक सिद्व होगी।

अध्याय - 2 छत्तीसगढ़ में उरांव जनजाति का परिचय

भारतीय समाज में अनेक ऐसे मानव समूह है जो बाह्य सभ्यता से सम्पर्क के पश्चात भी अपनी मौलिक सांस्कृतिक विशेषताओं को बनाए हुए हैं, ये अधिकांशतः शहरी सभ्यता से दूर घने जंगलों, पर्वतो, घाटियों, मैदानों एवं पठारी क्षेत्रों में निवास करते हैं। जो कुडुख भाषा–बोली बोलते है। जो सामान्य भाषा–बोली बोलते हैं, और अपनी विशिष्ट संस्कृति को प्रयोग में लाते हैं। इन्ही समुदायों को आदिवासी, आदिम जाति, जनजाति के रूप में जाना जाता है। इनकी आर्थिक, सामाजिक शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य संबंधी स्थिति अन्य समाजों की तुलना में पिछड़ी हुई है। स्वतंत्रता के पश्चात इन्हें समाज की मुख्यधारा के समकक्ष लाने के लिए भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति का नाम देकर अनुच्छेद 342 के तहत भारत सरकार द्वारा अलग–अलग राज्यों के अनुसूचित जनजाति समुह की सूची जारी की गई है। तथा इनके सामाजिक आर्थिक, शैक्षणिक विकास तथा इनके हितों के संरक्षण हेतु भारतीय संविधान में अनेक प्रावधान किये गये है।

छ.ग. के अनुसूचित जनजाति की सूची में अनुक्रमांक 33 पर उल्लेखित उरांव जनजाति छ.ग. की एक प्रमुख जनजाति है। यह जनजाति कुडुख भी कहलाती है। ये प्रोटो–आस्ट्रोलायड प्रजाति लक्षण के जनजाति है। इनका रंग सांवला हाथ पैर गठिले, चेहरा, फैला हुआ, नाक दबा,बाल घुघराले व काले, मुंछ और दाढ़ी कम शरीर बलिष्ठ होता है। ये आपस में संवाद के लिए जातीय बोली कुडुख, स्थानीय बोली सादरी, सरगुजिहा, जशपुरिया, छत्तीसगढ़ी तथा हिन्दी भाषा का उपयोग करते है। छ.ग. राज्य में इनकी जनसंख्या (जनगणना 2011) 748789 दर्शित है, इसमें पुरूष 373065 तथा स्त्रियां 375824 है। इनकी साक्षरता प्रतिशत (जनगणना 2011) 68.9 प्रतिशत है पुरूष की साक्षरता प्रतिशत 76.6 प्रतिशत तथा स्त्रियों की 61.4 प्रतिशत है।

1. उत्पत्ति एवं निवास :-

उरांव जनजाति की उत्पति के विषय में ऐतिहासिक अभिलेख नहीं है। परन्तु उरांव जनजातियों में प्रचलित किवदंति अनुसार धौलागीरी पर्वत में झिरी–हिरी नाला के पास तीन करम पेड़ के नीचे उत्पत्ति होना बताया गया है। समाज वैज्ञानिकों के अनुसार उरांव देश के पश्चिमी और उत्तर भागों में हजारों वर्ष पहले रहा करते थे। कालांतर में उनके पूर्वज शाहबाद (भोजपुर) क्षेत्र में प्रवेश किये। आर्यो के दबाव के कारण उन्हें शाहबाद छोड़ना पड़ा। कुछ समय तक उरांव रोहताश के पठारी इलाको में आश्रय लिए फिर छोटा नागपुर की ओर बढ़े। रोहताश छोड़ते वक्त वे दलों में बट गये। एक दल गंगा की तटवर्ती

इलाके से गुजरता हुआ राजमहल के पहाड़ी इलाकों में पहुंचा। दूसरा दल कोयल नदी की तटवर्ती मैदानों से होता हुआ पलामू (बिहार) क्षेत्र में प्रवेश किया। पलामू के बाद वे उत्तर–पूर्वी रांची में प्रवेश किया। छोटा नागपुर से कुछ लोग छत्तीसगढ़ के जशपुर, बलरामपुर, सरगुजा के पहाड़ी क्षेत्रों में आकर बस गये।

2. निवास :-

छ.ग. राज्य में इनका प्रमूख निवास राज्य की उत्तर–पूर्वी सीमा–जशपुर, रायगढ़ सरगुजा कोरिया, सूरजपुर बलरामपुर जिला है। समस्त उरांव क्षेत्र पर्वतों की मनोरम घाटियों तथा हरे भरे साल वनो से अच्छादित है। राज्य में जशपुर जिले में उरांव की जनसंख्या सबसे अधिक है।

3. भौतिक संस्कृति :-

उरांव जनजाति के लोग मुण्डा, नगेसिया, गोड़, कंवर, खैरवार, भूमिहार आदि जनजातियों के साथ ग्राम में निवास करते हैं। इनके घर मिट्टी के बने होते हैं। जिस पर लकड़ी और देशी खपरैल से छप्पर बनाते हैं। घर की दीवार की पुताई काली, लाल, सफेद मिट्टी, गोबर तथा चूने इत्यादि से लिपाई करते हैं। घर का फर्श मिट्टी का बना होता है, जिसे गोबर, मिट्टी से लीपते हैं। घर में दो–तीन कमरा होते है, चारो तरफ बरामदा नुमा **''परछी''** होती है। मुख्य बड़े कमरे में अनाज रखने की कोठी, देवी–देवता का स्थान होता है। जिसकी पोताई परिवार के रूढ़ी अनुसार काली, सफेद मिट्टी इत्यादि से की जाती है। रसोई घर परछी में होता है। इनके घर में मुख्यतः मिट्टी, एल्युमिनियम, कांसे व स्टील के कुछ बर्तन, चूल्हा, ढेकी, मूसल, चक्की, ओढ़ने बिछाने, पहनने के कपड़े, वाद्ययंत्र में झांझ, मांदर, बासुरी, घंट, नगाड़ा, मोहरी इत्यादि, कृषि के उपकरण मछली पकड़ने के जाल, चोरया, सिरसोला, कुम्हनी, बंशी, जाल आदि होते हैं।

4. व्यक्तिगत स्वच्छता :-

उरांव पुरूष व महिलाएं प्रतिदिन करंज, नीम, हर्रा, साल, सेंधुआर (निरगुंड़ी) आदि की दातुन से दांतो की सफाई कर स्नान करते हैं। पुरूष बाल छोटे रखते हैं। स्त्रियां लम्बे बालो का जूड़ा (खोपा) या बेनी बनाती हैं। बाल धोने के लिए मुड मिसना मिट्टी, साबुन तथा सैम्पू का उपयोग करते हैं।

5. वस्त्र विन्यास :-

उरांव जनजाति के पुरूष छोटी धोंती व अंगरखा पहनते हैं। महिलाएं लुगड़ा–पोलका पहनती हैं, नवयुवक पेंट, शर्ट, नवयुवतियॉ साड़ी, पेटीकोट, ब्लाउज पहनती हैं।

6. भोजन :-

उरांव जनजाति का मुख्य भोजन चावल, गोंदली, कोदो, मकई, गेंहू का भात, पेज व रोटी है। इसके साथ उड़द, मूंग, कुलथी, अरहर, मसूर की दाल तथा मौसमी साग–सब्जी जैसे सिलयारी, सरसो, घुमा, बेंग (ब्राम्ही), झिलों, मुंडली, चुनचुनिया, भथुवा, केना, करमत्ता, चिखला इत्यादि खाते हैं। मांसाहार में मुर्गा, मछली, बकरा आदि का मांस खाते हैं। त्यौहार व उत्सवों में चावल का हंड़िया बनाकर पीते हैं। थकान मिटाने या दवाई के रूप में महुआ का दारू भी सेवन करते है।

7. आर्थिक जीवन :-

उरांव जनजाति का मुख्य आर्थिक स्त्रोत कृषि, मजदूरी, वनोपज संग्रह आदि है। कृषि में पहाड़ी ढलान पर कोदो, गोंदली, साठीधान, उड़द, मूंग, कुलथी अरहर आदि तथा नीची सेरहा भूमि में उन्नत धान बोते हैं। असिंचित भूमि में उत्पादन कम होता है। जिसके पास जमीन कम है वे अन्य कृषक के खेतो में मजदूरी करते हैं। जंगल से तेन्दुपत्ता, माहुल पत्ता, महुवा, गुल्ली, साल बीज, चार, चिरौंजी, कोसा, धवईफूल, शहद आदि एकत्र कर बेचते हैं। शिक्षित उरांव युवक–युवतियां शासकीय नौकरी करते हैं। स्वयं के उपयोग हेतु मछली भी पकड़ते हैं।

8. सामाजिक संरचना :-

उरांव जनजाति को कई क्षेत्रों में धांगड़, धनका, कोड़ा, सौंसार, सौंसारी उरांव कहा जाता है। कुछ लोग अब उरांव से इसाई उरांव में परिवर्तित हो गये है। इसमें समगोत्री विवाह वर्जित हैं। इसके प्रमुख गोत्र लकड़ा, तिग्गा, तिर्की, टोप्पो, मिंज, बेक, खलको, कुजूर, खाखा, एक्का, बड़ा, किस्पोटा, केरकेट्टा, गिद्धी, पना, बरवा, खेस, बखला, किण्डो, बरला, हुरहुरिया, चेरमाको आदि हैं। प्रत्येक गोत्र पशु–पक्षी, जीव–जन्तु, वृक्ष, धातु आदि के नाम से हैं, और इनके वंश चिन्ह (टोटम) पाये जाते है।

9. जन्म संस्कार :-

उरांव जनजाति में गर्भवती महिलाएं प्रसव के दिन तक अपनी आर्थिक तथा पारिवारिक कार्य करती हैं। प्रसव घर पर ही ''सयानी'' (कुसरयीन) स्त्रियों के देख–रेख में कराया जाता है। बच्चे का नाल छुरी को आग में तपाकर या ब्लेड से काटा जाता हैं। नाल को घर में ही गाड़ते हैं। प्रसव के बाद प्रसूता को प्रसव पश्चात जड़ी बुटियों का काड़ा विशेष रूप से उड़त दाल माड के साथ बनाकर मछली आदि खिलाते है। बच्चे के नाल झड़ने के पश्चात दादा या नाना के द्वारा बच्चे का मुण्डन किया जाता है, प्रसूती तथा नवजात शिशु को नहलाकर नये वस्त्र पहनाते है। माता एवं नवजात शिशु सभी का आर्शीवाद लेते है। कांस थाली में महादेव पार्वती के नाम से धान/चावल गिराकर पितर जांचा जाता हैं। आयोजन में रिश्तेदारों का पाक–पकवान आदि से स्वागत किया जाता है।

10. विवाह संस्कार :-

उरांव जनजाति के विवाह उम्र लड़कों की 21 से 24 वर्ष तथा लड़कियों की 18 से 22 वर्ष उपयुक्त मानी जाती है। विवाह का प्रस्ताव लड़के वालों की ओर से लड़की वाले को दिया जाता है। वर पक्ष वधु पक्ष को सुक दाम, वधु मूल्य के रूप में चावल, दाल, सरसो तेल, मैसारी, साड़ी आदि देते है। दहेज प्रथा का रिवाज नहीं है। विवाह की रस्म जाति के पंचों, बुजूर्ग व्यक्तियों की देख–रेख में सम्पन्न होता है। ईसाई उरांव में शादी के पूर्व 3 से 7 दिन तक चर्च में शिक्षा दी जाती है। विवाह रस्म चर्च में सम्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त ढूकू, विनिमय, घर जमाई प्रथा, विधवा–परित्यक्ता का पुनर्विवाह को भी सामाजिक मान्यता है।

11. मृत्यु संस्कार :-

इस जनजाति में किसी व्यक्ति की मृत्यु होने पर मृतक को दफनाते है। कुछ परिस्थितियों में जलाते भी हैं। मृत्यु के तीन दिनों बाद तीज नहावन हेतु रिश्तेदारों एवं सामाजिक बंधुओ को बुलाया जाता है। नदी नाले में सभी रिश्तेदार स्नान करते है। घर की साफ–सफाई की जाती है। इसी दिन से मृतक के घर परिवार को शुद्ध माना जाता है। तीन माह बाद गमी मनाया जाता है। जिसमें परिवार तथा गांव के लोगों को भोज दिया जाता है। ईसाई उरांव में मृत्यु के समय पादरी को बुलाया जाता है। वह ज्ञान का उपदेश देता है। पापों के प्रायश्चित कराया जाता है। तथा आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना की जाती है। इसे अन्तमलन संस्कार कहते है।

7

12. जातीय पंचायत :-

उरांव जनजाति बाहुल्य क्षेत्रों में परम्परागत पड़हा पंचायत होती है। जो स्थानीय स्वशासन व्यवस्था है, जो स्थानीय समस्याओं, मारपीट, चोरी, वैवाहिक विवाद, अनैतिक संबंध, सम्पति का बटवारा आदि का निपटारा करती है। ग्राम के सरना पूजा, खररूज, हरोली, कठोरी, करमा पूजा आदि की भी व्यवस्था करती है। परम्परागत राजनैतिक संस्था पड़हा व्यवस्था है। जिसके पांच स्तर हैं :– 1. अतख़ा पड़हा (ग्राम पंचायत स्तर), 2. डाड़ा पड़हा (जनपद स्तर), 3. मूली पड़हा (जिला स्तर), 4. पादा पड़हा (राज्य स्तर), 5. राजी पड़हा (राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय स्तर)। प्रत्येक स्तर में अग्रलिखित पदाधिकारी होते हैं :– बेल, देवान, रकम उरबस, कहतो, कोटवार, पंच तथा सलाहकार होते है, तथा पांच पड़हा पंचायत में एक करटहा/बईगा, एक चेंगना धरवा, एक पईन भरवा होते है। जिसमें से कोटवार, बईगा, चेंगना धरवा, पईन भरवा का कार्य करने वालों को पड़हा पंचायत द्वारा जीवन यापन हेतु जमीन प्रदान किया जाता है।

13. धार्मिक जीवन :-

उरांव जनजाति के लोग प्रमुख रूप से निराकार धर्मेश, महादेव–पार्वती तथा पितर पुरखो को मानते हैं, अपनी परम्परागत संस्कृति एवं रीति–रिवाजों का पालन करते है। इनके जीवन में जीववाद, प्रकृतिवाद, टोटमवाद ये सभी परिलक्षित होते हैं। ग्राम देवी–देवता में महादानी, दरहा, जोंख चड़ी, गांव देवता आदि है। साथ ही अपने वंश चिन्ह (टोटम), सूर्य, चन्द्रमा, तारे, धरती, नदी, पर्वत, नाग, आदि प्रकृति का भी पूजा करते है। गांव के सरना में ग्राम देवता का वास होता है। बुजुर्ग लोग, भूत–प्रेत को अनिष्ठ कर्ता मानते हैं तथा जादू–टोना पर भी विश्वास करते हैं। इससे संबंधित परेशानियों से छुटकारा पाने के लिए देवार/गुनिया लोगों का सहारा लेते है। तंत्र–मंत्र के जानकार व देवी–देवताओं के पुजारी पहान/बैगा कहलाते है। कुछ अवसरों पर भाख काट कर दोष दूर किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त पीढ़ी पूजा, खुटी पूजा, डंगरी पूजा, हरयारी पूजा पलकासना पूजा करते हैं। जो लोग धर्मातंरित हो गये है वे गिरजा घर/चर्च में जाकर प्रार्थना करते है, और फादर/पास्टर के अनुसार चलते है।

14. पूजा/पर्व :-

इनका प्रमुख पूजा / पर्व करम परब **(करम डाली करम पूजा पर ही काटी व स्थापित की जाती है**), नावा कोड़हा (तुसगो कुण्डो), सोहरई, छेरता, माघे, फग्गू, खद्दी परब, (सरहुल) है। इन पूजा / पर्वो में नारियल एवं मुर्गा आदि का बलि अपने देवी–देवता में चढ़ाते है।

15. लोक नृत्य एवं गीत :-

उरांव जनजाति के प्रमुख नृत्य करमा, सरहुल, विवाह, डोमकेच नृत्य आदि है। लोक गीतों में करमा गीत, सरहुल गीत, फागुन गीत, सोहराई गीत, विवाह गीत, मौसमी गीत एवं भजन आदि हैं।

16. बोली-भाषा :-

इस जनजाति की अपनी विशेष बोली है जिसे ''**कुडुख़**'' बोली कहा जाता है। इस जनजाति के लोग आपस में कुडुख़ बोली में बातें करते हैं।

9

अध्याय - 3 उरांव जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन

भौतिक संस्कृति :-

भौतिक संस्कृति से तात्पर्य उन वस्तुओं, समानो, सम्पतियों से जो मूर्त रूप से दिखाई देता है, जिसका हम अवलोकन, मूल्यांकन कर सकते हैं। भौतिक संस्कृति के अन्तर्गत हम जनजाति समाज के निवास क्षेत्र, बसावट, आवास साफ–सफाई, व स्वच्छता, घरेलू उपकरण, रसोई उपकरण, वस्त्र विन्यास, आभूषण, कृषि से संबंधित उपकरण, शिकार से सम्बधित उपकरण, तीज त्यौहारों के अवसरों पर बजाये जाने वाले वाद्‌य यंत्रों आदि का शामिल करते हैं। उरांव जनजाति में भौतिक सांस्‌तिक परिवर्तन निम्न हैं –

(1) निवास एवं बसाहट :-

पारम्परिक :- छततीसगढ़ में उरांव जनजाति वैसे तो छिटपुट सभी तरफ हैं परन्तु अधिकांश निवास क्षेत्र झारखण्ड राज्य के छोटा–नागपुर के पठार से लगे (सटे) उत्तर पूर्वी सीमा, जशपुर, रायगढ़, सरगुजा, बलरामपुर के वनांचल क्षेत्रों में कबीले के रूप में निवास करते रहे हैं।



आधुनिक :- उरांव जनजातियों का निवास क्षेत्र पहाड़ों एवं जंगलों से कुछ दूरी पर जंगल कम होने के कारण अब बस्ती स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

कारण :- कुछ लोगों का पहाड़ों एवं जंगलों से दूर रहने का मुख्य कारण जंगल कटना, जंगलो में जीवन यापन करने के पर्याप्त जंगली उपजों की कमी, जंगली जानवरों से जान का खतरा, कृषि संबंधी कार्य करने में कठिनाई आदि हो सकती है। पहाड़ों एवं जंगलों से कुछ दुर पर बसने से शासन की विभिन्न मूलभूत योजनाएं, आवास, पेयजल, विद्युत, सुविधा, पाठशाला, चिकित्सा सुविधा, सड़क आदि की सुविधा इनकी गांवो तक पहुंच रही हैं। जिससे इनके जीवन स्तर में बदलाव आ रहा है।

(2) आवास :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के लोगों के घरों की दीवार मिट्टी एवं छप्पर समान्यतः लकड़ी देशी खपरैल के होते थे, घर की दीवार की लिपाई–पोताई, काली, सफेद, लाल, पीली इत्यादि मिट्टी व गोबर से करते हैं। घर का फर्श मिट्टी का बना होता था जिसमें प्रतिदिन महिलायें गोबर व मिट्टी से लीपती हैं। सामान्यतः घर में दो–तीन कमरे होते थे, घर के चारों तरफ बरामदा नुमा परछी होता था। मुख्य बड़े कमरे में अनाज रखने की कोठी व कुल देवी–देवता (पीतर/पुर्खो) का स्थान होता था। इनका रसोई घर परछी में होता था। पूर्व में घरों का निर्माण परिवार के सदस्य मिलकर स्वयं अथवा आपसी सहयोग (मदत) से करते थे। कमरों में खिड़किया नहीं होती थीं क्योकि खपरैल के छत से पर्याप्त रौशनी एवं हवा प्राप्त हो जाते थे।



11

आधुनिक :- वर्तमान में पारंपरिक के साथ ही कुछ परिवारों के घर ईट, सीमेंट, रेत एवं छड़ की मदद से पक्का, अर्द्धपक्का बनने लगे हैं। कमरों की संख्या में भी परिवर्तन हुआ है। कई लोगो के घरों की छप्पर खपरैल के जगह सीमेंट से बनी सीट से ढंकी होती है। घर की दीवार की लिपाई–पोताई काली, सफेद, लाल, पीली इत्यादि मिट्टी व गोबर के अलावा चूने या डिस्टेंपर से भी करने लगे हैं। अब इनके रसोई कमरे अलग होते हैं, जिसमें प्रकाश व हवा आने जाने के लिए खिड़कियां बनी होती हैं। कुछ परिवार बाहर से मिस्त्री, मजदूर करके अपने घरों को बनवा रहें हैं जिसमें सोने, खाने, विश्राम, रसोई कक्ष, अलग–अलग बने होते हैं। घर की फर्श में सीमेंट की कांक्रीट, टाईल्स, मार्बल पत्थर बिछने लगे हैं।





कारण :- इनकी आय में वृद्धि एवं परसंस्कृतिकरण भी इसका कारण है। कुछ उरांव परिवार उन्नत तरीके से कृषि कार्य कर रहें हैं। कुछ परिवारों के सदस्य पढ़–लिख कर शासन के विभिन्न विभागों में शासकीय नौकरी कर रहें हैं। इसके अतिरिक्त इनके द्वारा संग्रहित किये जाने वाले वनोपज का भी उचित मुल्य शासन के द्वारा दिया जा रहा है। पंचायत स्तर में खरीब फसल के बाद खाली समय में लोगो को रोजगार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से प्रति परिवार रोजगार गारंटी योजना संचालित है, जिनमें उरांव परिवार के सदस्य मजदूरी कार्य करके अपने आय में वृद्धि कर रहें हैं। कुछ परिवारों को शासन के माध्यम से इंदिरा आवास, प्रधानमंत्री आवास, योजना के तहत आवास निर्माण किये गये हैं।



(3) व्यक्तिगत स्वच्छता :-



पारम्परिक :- उरांव जनजाति के सदस्य प्रतिदिन करंज, नीम, हर्रा, साल, सेंधुआर (निरगुंडी) वृक्ष के पतली टहनियों की दातुन से दांतो को साफ करके स्नान करते हैं। शरीर व बालों को धोने के लिए एक विशेष प्रकार की चिकनी मिट्टी (मुलतानी) का उपयोग करते हैं, कपड़ा धोने के लिए लकड़ी के राख को कपड़े के साथ उबाल कर प्रयोग किया जाता रहा है। हाथ, पैर में डोरी या अन्य वनस्पति का तेल लगाते थे, स्त्रीयॉ लम्बे बालों का जूड़ा या बेनी बनाती हैं। शौच खुले स्थानों में जाते थे। पेय जल एवं स्नान आदि के लिए ढ़ोड़ी, नदी–नाले, कुएं एवं प्राकृतिक संसाधनों पर आश्रित थे।

13

आधुनिक :- अब दातून के साथ ही अधिकांश सदस्य अपने दांतो की सफाई टूथब्रस, टूथपेस्ट से करने लगे हैं। शरीर को धोने के लिए नहाने का साबुन, कपड़ा धोने के लिए वांसिग पाउडर, कपड़ा धोने का साबुन तथा हाथ पैर में लगाने के लिए विभिन्न प्रकार के तेलों का उपयोग करने लगे है।



कारण :- शौच हेतु सभी घरों में स्वच्छ भारत अभियान के तहत शौचालय का निर्माण शासन के माध्यम से किया गया है। पेयजल हेतु हेण्डपंप एवं बोरवेल के पानी उपयोग में ला रहे हैं। जिससे दूषित पानी से होने वाले अनेकों बिमारियों से मुक्ति मिल रही है।

(4) वस्त्र विन्यास :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के पुरूष छोटी धोती व अंगरखा पहनते थे तथा महिलायें लुगड़ा–पोलका पहनती थी, पूर्व समय में पहनने के कपड़े सूती के ही बने होते थे।





आधुनिक :- वर्तमान समय में परम्परागत तरीके से सूती कपड़े बनाने वाले बुनकर, बड़ाईक या जुलाहा अब बहुत कम मात्रा में कपड़ा बुनते हैं। सूती कपड़ा बाजार में महंगा मिलता है। उरांव पुरूष सदस्य छोटी धोती व अंगरखा के बदले लुंगी, बनयान, धोती कुरता, पैजामा कुर्ता आदि पहनने लगे हैं। नवयुवक पेंट, शर्ट, जींस, टी—शर्ट, नवयुवतियां सलवार सूट, साड़ी, पेटीकोट, ब्लाउज, बालक हाफ पैंट, फुल पैंट, टी—शर्ट, शर्ट, चड्डी बनयान बालिका सलवार सूट, फ्रॉक आदि पहनते हैं।



कारण :- वेशभूषा में परिवर्तन का मुख्य कारण परम्परागत वेशभूषा स्थानीय बाजार में नहीं बिक रहे हैं। यदि कहीं मिल भी जाए तो बहुत महंगा मिलता है। वर्तमान समय में रेडीमेंट कपड़ा आसानी से कम मूल्य में उपलब्ध है।

(5) भोजन खान-पान :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति का मुख्य भोजन चावल, गोंदली, कोदो भात व पेज आदि है। इसके अलावा घुघरी, ढुसका रोटी, पुवा रोटी, चिला रोटी, थपडी रोटी, पत्ता रोटी, गुझा, रसोरा इत्यादि इनके नास्ते एवं पाक पकवान है। दालों में उड़द, मूंग, कुलथी, अरहर, मसूर, खेसारी की दाल का प्रयोग करते है। मौसमी साग—सब्जी जैसे सरसो, सिलयारी, घुमा, बेंग (ब्राम्ही), झिलों, मुण्डली, चुनचुनिया, भथुआ, केना, करमत्ता, चिखला, पकरी (फुटकल), चरोटा, सरला, ठेपा, चेंच, मुनगा, कोईलार, गिरहोल फूल, पूटू, खुखड़ी व करील आदि के अलावा बाड़ी में उगाये साग—सब्जियों को भी खाते हैं। मासांहार में मुर्गा, मछली, बकरा आदि का मांस भी खाते थे। पर्व व उत्सवों में हंड़िया बनाकर देवों को अर्पित कर स्वयं भी पिते हैं।

15

आधुनिक :- पारंपरिक के साथ अब भोजन (खान–पान) परिवार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों की खान–पान (भोजन) में परिवर्तन आया है। ऐसे परिवारों में सुबह चाय–नाश्ता, दो–पहर व रात्रि में खाना (चावल, रोटी, दाल, हरी साग–सब्जी) खाते हैं। बीच–बीच में चाय पीते हैं। समय–समय पर मुर्गा, मछली, बकरा आदि का मांस खरीद कर या घर में पाले हुए रहते हैं, उसे खाते हैं। पर्व उत्सवों के अवसरों में पारंपरिक व्यंजनों के साथ विशेष कर उड़द का बरा, मुर्गा इत्यादि खाते हैं।

कारण :- वर्तमान समय में कुछ उरांव परिवार अपनी आर्थिक स्थिति में काफी सुधार किये हैं। भारत सरकार व राज्य सरकार के द्वारा खाद्य सुरक्षा कानून ला कर सभी परिवार को भोजन का अधिकार दिया गया है। जिसके तहत सभी गरीब परिवारों को रियायती दरों में चावल, गेहूँ, शक्कर, मिट्टीतेल, नमक आदि दिया जाता है। इसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ शासन के महिला बाल–विकास द्वारा बच्चों को कुपोषण से बचाने के लिए दूध, चावल, दलिया आदि वितरित किया जाता है। स्कुल में पढ़ने वाले बच्चों को शासन के द्वारा प्रतिदिन मध्याहन भोजन कराया जाता है। ये सभी प्रयास आदिवासी अंचलो के लोगों को कुपोषण से बचाने के लिए किया जा रहा है। इन सभी योजनाओं का लाभ उरांव जनजाति के लोग भी ले रहें हैं। जिसके कारण इनके खान–पान की स्थिति में बदलाव आया है।

(6) घरेलू उपकरण :-

पारम्परिक :- खाना बनाने के लिए पीतल, कांसा, लोहा व मिट्टी के बर्तनों का उपयोग किया जाता था। आनाज कुटने पीसने के लिए प्रत्येक घरों में ढेंकी, मुसल, बहना, पत्थर का जांता होता था। खाना मिट्टी के चूल्हें में बनाते थे। घरेलू सामानों को





रखने के लिए बांस के बने टोकरियों को उपयोग में लाते थे, घरों को रात्रि के समय प्रकाश के लिए टिमनी (ढिबरी) या मिट्टी के दीये जलाते थे। भोजन मिट्टी के चूल्हे में लकड़ी जलाकर बनाया जाता था।

आधुनिक :- पारंपरिक रसोई उपकरणों के साथ–साथ एल्युमिनियम, स्टील एवं अन्य धातु के बने बर्तनो का भी उपयोग करने लगे हैं। आनाज कुटने, पीसने के लिए पारंपरिक साधनों के साथ ही हॉलर मिलों से कराने लगे हैं। अब प्लास्टिक के बने वस्तुओं में सामानो को रखने लगे हैं। अब घरों



को विघुत से प्रकाश करते हैं। खाना बनाने में पारंपरिक चूल्हे के अलावा एल.पी.जी. गैस का भी उपयोग करने लगे है।

कारण :- मिट्टी के बर्तन टिकाउ नहीं होने के कारण इनका उपयोग अब बहुत कम हो गये है। जबकि प्लास्टिक और धातु से बने बर्तन टिकाउ होने के कारण चलन में ज्यादा है। शासन की उज्जवला योजना के अंतर्गत प्रायः सभी परिवारों को मुफ्त एल.पी.जी. गैस एवं चूल्हा उपलब्ध कराया गया है। इसका उपयोग कर रहे है।





17



(7) कृषि उपकरण :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के अधिकांश सदस्य कृषि कार्यों में संलग्न हैं। कृषि जीविकोपार्जन का मुख्य साधन हैं। कृषि उपकरण परम्परागत तरीके के होते थे। खेती के लिए नांगर, जुआ, नाधा, पैना, नांगर लोहा, पाटा, बख्खर, दतारी, बेलन, बैलगाड़ी, कलारी, कांवर सिंका, दौंरी, हंसिया, गैंती, फावड़ा, कुल्हाड़ी, बसूला आदि कृषि उपकरणों का उपयोग करते थे।



आधुनिक :- अब परम्परागत कृषि उपकरणों के अतिरिक्त आधुनिक कृषि उपकरण जैसे ट्रैक्टर, थ्रेसर, हारवेस्टर इत्यादि मशीनों के माध्यम से कृषि कार्य करने लगे हैं। गांव के कुछ सम्पन्न व्यक्तियों के पास ट्रैक्टर, थ्रेसर एवं अन्य आधुनिक उपकरण होते है।

कारण :-
1. कृषि में तकनीकों की समझ बढ़ने के कारण।
2. आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने के कारण।
3. शासन की योजना में कृषि यंत्रीकरण को बढ़ावा देने के लिए, शासन द्वारा इन्हें कृषि उपकरण एवं खरीदने पर अनुदान आदि दिया जाता है।
4. समय एवं श्रम में बचत के कारण।

(8) आभूषण :-





पारम्परिक :- उरांव जनजाति की महिलाएं आभूषण की शौकीन होती हैं। इनके आभूषण परम्परागत तरीके से चांदी, गिलट, पीतल, तांबे आदि धातु के बने होते थे। महिलायें गले में हसली, रूपया माला, दोनों बांह में नागमोरी (पहुंची), कलाई में ऐंठी, कानों में खिनवा, लोहा झुमका, नाक में नथनी, पैर में पैर पट्टी, कमर में करधनी, कमर बंद पहनती थी। इसके अतिरिक्त शरीर के विभिन्न अंगों में सुंदरता के लिए गोदना (टैटू) भीषोदवाती थी।

आधुनिक :- अब इनके आभूषणों के डिजाईन (बनावट) तथा धातुओं में परिवर्तन दिखाई देने लगा है। पारंपरिक आभूषणों को विशेष अवसरों में पहनते है। सोने व चांदी के अलावा आधुनिक आभूषणों का भी प्रयोग करती हैं। गोदना (टैटू) का प्रचलन अब कम हो गया है।

कारण :- आर्थिक स्थिति में सुधार, आधुनिकीकरण के कारण महिलाएं पारम्परिक गहनों को विशेष अवसरों में पहनना ज्यादा पसंद करती हैं।





19

(9) शिकार के उपकरण :-





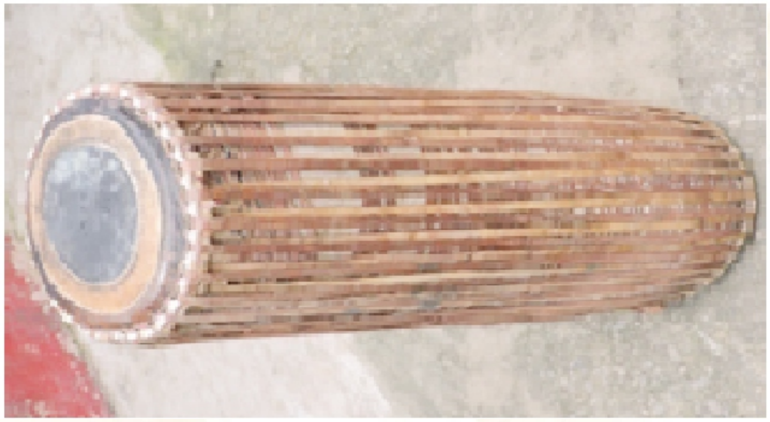
पारम्परिक :- उरांव जनजाति के लोग शिकार तीर, धनुष, गुलेल, भाला, कुल्हाड़ी, जाल, कुमनी, चोरया, गिरा, पहटा, चोंप (लासा), छोपा लोहे की तार के (फंदा) आदि से करते थे।

आधुनिक :- जंगली जानवरों का शिकार अब प्रतिबंधित है। पक्षियों व मछलियों का शिकार करते हैं।

कारण :- वर्तमान समय में जंगली जानवरों के शिकार पर प्रतिबंध होने के कारण जंगली जानवरो का शिकार नहीं करते हैं।

(10) वाद्य यंत्र :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति विभिन्न पर्वो के अवसरों पर लोकगीत व लोक नृत्य मुख्यतः मांदर, ढोल, झांझ, मोहरी, बांसुरी, नगाड़ा, घंट इत्यादि का उपयोग लय ताल के साथ करते थे।



आधुनिक :- वर्तमान में इनके वाद्य यंत्रों में अब ये परम्परागत वाद्य यंत्र के साथ–साथ ढोलक, तबला, बेंजो, हारमोनियम, केशियो, डफली, डी.जे. आदि वाद्य यंत्रो का भी वादन करने लगे हैं।

कारण :-1. बाजार में उपलब्ध आधुनिक वाद्ययंत्रों का



उपयोग ज्यादातर गीत–संगीत कार्यक्रमों में किया जाता है। विभिन्न प्रकार के आधुनिक वाद्ययंत्र बाजार में आसानी से उपलब्ध होते है। इनके द्वारा भी पारम्परिक वाद्ययंत्रों के साथ–साथ आधुनिक वाद्ययंत्रों का भी उपयोग किया जाता है।

2. अन्य समुदायों के द्वारा सांस्कृतिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों जैसे जन्म उत्सव, विवाह एवं अन्य उत्सवों में उपयोग किये जाने वाले आधुनिक वाद्ययंत्रों एवं उपकरणों के प्रभाव से प्रभावित होकर कुछ लोग इनका उपयोग करने लगे है।

(11) यातायात के साधन :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के सदस्य पूर्व में एक स्थान से दूसरे स्थान आने जाने के लिए पैदल, बैलगाड़ी, घोड़ा, घोड़ा गाड़ी आदि वाहनों का उपयोग करते थे।



आधुनिक :- वर्तमान समय सभी उरांव परिवारो के पास कम से कम एक सायकल है। सम्पन्न परिवारों के लोग आवागमन के लिए सायकल, मोटर सायकल, चार पहिया वाहन आदि उपयोग कर रहे है।

कारण :- 1. आर्थिक स्थिति सुधार।

2. आधुनिकीकरण।

3. समय की बचत के लिए।

4. गांवों में सड़क निर्माण होने की वजह से सार्वजनिक वाहन आसानी से गांवों में लोगों के लिए उपलब्ध होती है।



21

आर्थिक स्थिति में परिवर्तन :-

उरांव जनजाति का जीवन यापन कृषि एवं वनोपज पर आधारित था। वर्तमान में शिक्षा के प्रसार के बाद उरांव जनजाति के कुछ परिवारों में शासकीय सेवा में लोग मिलेगें। अतएव उन्नत कृषि, मजदूरी के साथ शासकीय सेवा से होने वाले आय का इनके जीवन स्तर पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। अन्य जनजातियों की तुलना में इनकी आर्थिक व्यवस्था काफी सुदृढ़ हुई।

(1) कृषि :-







पारम्परिक :- उरांव जनजाति के लोग परम्परागत तरीके से कृषि करते थे। खेत जोतने के लिए पशुओं का उपयोग करते थे। वर्षा आधारित कृषि करते थे। स्वयं का बीज एवं गोबर खाद का उपयोग करते थे। कृषि छिटा पद्धति से करते थे। कृषि डांड, चांवर या खेत में करते थे व मोटा फसल का पैदावार करते थे। फसल की कटाई मिंसाई भी परम्परागत तरीके से करते थे।

आधुनिक :- वर्तमान में परम्परागत कृषि पद्धति के साथ–साथ आधुनिक तरीके से कृषि करने लगे हैं। खेत जोतने के लिए, बैल के आलावा ट्रेक्टर एवं अन्य कृषि उपकरणों का उपयोग करने लगे हैं। कुछ कृषक शासन के सहयोग से खेतो में सिंचाई के लिए, बोरवेल, सिंचाई मशीन, नदी नाले एवं नहर आदि का भी उपयोग करने लगे है। कुछ डांड (भर्री)

को खेतो में परिवर्तित कर लिये हैं, उन्नत बीज एवं गोबर खाद के साथ–साथ रासायनिक खाद का उपयोग करने लगे हैं। परंपरागत कृषि छिंटा, लाइचोपी पद्धति के साथ–साथ रोपा पद्धति से भी करने लगे हैं। फसल की कटाई व मिसाई भी आधुनिक उपकरणों, थ्रेसर, ट्रैक्टर आदि का भी उपयोग करने लगे हैं।

कारण :-1. कृषि के लिए आधुनिक उपकरणों के उपलब्धता के कारण।

2. उन्नत खाद, बीज, कीटनाशक आसानी से सहकारी सेवा समिति व निकट बाजार में उपलब्धता के कारण।
3. ज्यादा उत्पादन की चाह में।
4. कृषकों के उत्थान के विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत कृषि उपकरण उपलब्ध कराया जाता है। खेतों का समतलीकरण, उन्नत रासायनिक खाद, बीज के अलावा कृषि उत्पाद बेचने के लिए मंडी आदि की व्यवस्था की जाती है।

(2) वनोपज संग्रहण :-



पारम्परिक :- उरांव जनजाति अपने जीविकोपार्जन हेतु वनोपज पर आश्रित होते थे, वनोपज में मुख्यतः कंदमूल, फल, तेन्दूपत्ता, सरईबीज, धवंईफूल, चारबीज आदि का संग्रहण अधिकांशतः परिवार के सभी सदस्य मिलकर करते थे, जो वनोपज उपभोग के अतिरिक्त होता था। उन्हें स्थानीय हाट बाजार में विक्रय या विनिमय कर अपने जरूरत की वस्तुएं खरीदते थे। स्थानीय हाट बाजार में साहूकारों, बिचौलिये बहुत कम दाम में वनोपज को खरीदीकर अधिक मुनाफा कमाते थे।

आधुनिक :– वर्तमान में उरांव जनजाति की वनोपज में जीविकोपार्जन की आश्रिता में कमी आयी है, परिवार के सभी सदस्य वनोपज संग्रहण नहीं करते हैं, तथा जो वनोपज संग्रहण करते हैं, उन्हें स्थानीय हाट बाजार के अतिरिक्त सरकारी खरीदी केन्द्रों में विक्रय कर देते हैं।

23

कारण :- 1. नये पीढ़ी के उरांव सदस्य वनोपज संग्रहण में रूचि कम लेते है, बल्कि अन्य साधनों से आय कमाना अच्छा मानते हैं।

2. राज्य सरकार के द्वारा समर्थन मूल्य पर वनोपज खरीदने की व्यवस्था किया गया है। जहां उन्हें वनोपज का अच्छा मूल्य मिल जाता है। जिसके कारण साहूकारों के द्वारा शोषण में भी कुछ कमी आई है।

(3) मजदूरी :-

परम्परागत :- उरांव जनजाति के सदस्य बड़े कृषक परिवारों के यहां कृषि मजदूरी भी करते थे।

आधुनिक :- वर्तमान में कृषि मजदूरी के साथ ही शासन के महात्मा गांधी रोजगार गारंटी योजना में भी मजदूरी करने जाते हैं। इस योजना में शासन के प्रत्येक परिवार को रोजगार की गारंटी दी गई है। इसके अतिरिक्त वन विभाग में भी समय–समय पर मजदूरी करने जाते हैं।

कारण :- शासन के द्वारा रोजगार का अवसर उपलब्ध कराया गया है।





(4) व्यापार :-

परम्परागत :- उरांव जनजाति की परम्परागत व्यवसाय कृषि, वनोपज संग्रहण, मजदूरी ,पशुपालन आदि था।

आधुनिक :- पढ़े लिखे उरांव सदस्य परम्परागत व्यवसाय के साथ–साथ व्यापार, किराना दुकान, पोल्ट्री फार्म, कृषि से संबंधित दुकाने आदि में भी रूचि ले रहे है।

कारण :- शिक्षित होने के कारण, परसंस्कृतिकरण के कारण एवं आधुनिकता के कारण।



25

सामाजिक जीवन (संरचना) में सांस्कृतिक परिवर्तन :-

परम्परागत :- उरांव जनजाति को कई क्षेत्रों में धांगड़, धनका, कोड़ा, सौंसार, सौंसारी उरांव कहा जाता है। कुछ लोग अब उरांव से इसाई उरांव में परिवर्तित हो गये है। इसमें समगोत्री विवाह वर्जित हैं। इसके प्रमुख गोत्र लकड़ा, तिग्गा, तिर्की, टोप्पो, मिंज, बेक, खलको, कुजूर, खाखा, एक्का, बड़ा, किस्पोटा, केरकेट्टा, गिद्धी, पना, बरवा, खेस, बखला, किण्डो, बरला, हुरहुरिया, चेरमाको आदि हैं। प्रत्येक गोत्र पशु–पक्षी, जीव–जन्तु, वृक्ष, धातु आदि के नाम से हैं, और इनके वंश चिन्ह (टोटम) पाये जाते है।

आधुनिक :- कुछ उरांव परिवार इसाई मिसनरी के प्रभाव में आकर इसाई धर्म को मानते हैं। धार्मिक आधार पर उरांव व इसाई उरांव में विभक्त है।

कारण :- मिशनरी के पादरियों द्वारा कुछ उरांव लोगों को इसाई धर्म के प्रति आकर्षित किये जाने से इसाई धर्म को स्वीकार कर लिया है। इसलिए इसाई उरांव में भेद किया गया है। मूलतः उरावं लोग आदिवासी संस्कृति, परम्परा, रीति–रिवाज का अनुशरण आदिकाल से करते आ रहे हैं।

जीवन संस्कार में सांस्कृतिक परिवर्तन :- विश्व के सभी समाजों में शिशु जन्म, विवाह, मृत्यु के समय पूर्व निश्चित नियमों, अनुष्ठान का पालन किया है, इन्हें ही संस्कार कहा जाता है। समाज की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के आधार पर आयोजन में विविधता पायी जाती है। उरांव जनजाति में भी मुख्यतः जन्म, विवाह, मृत्यु के समय इन संस्कारों को अपने परम्परागत नियमों से करते आ रहें हैं।

(1) जन्म संस्कार :-

पारम्परिक :- पहले प्रसव कार्य ग्राम के सयानी (कुसरइन) के द्वारा कराया जाता था। गर्भकाल के 5वें महिने में बाह में काडा (गाय या भैस के पूछ के बाल से निर्मित मोटा धागा) कुसरइन द्वारा बांधा जाता था। बच्चे के नाल को गर्म छूरी या चाकू से काटा जाता था। प्रसव कार्य घर में होता था। बच्चे के नाल को घर के दरवाजे में गाड़ दिया जाता था। प्रसव के बाद महिला को स्वास्थ रखने के लिए जंगली जडी बूटियों का काढ़ा पिलाया जाता था। छट्टी नाल झड़ने के बाद मनाते हैं। छट्टी में नाई, धोबी को नहीं बुलाया जाता था। परिवार के सदस्य ही परम्परागत तरीके से घर का शुद्धिकरण करते थे। बच्चा किसका पितर है यह जानने के लिए बच्चे का पीतर मिलान विशेष विधि द्वारा किया जाता था। पीतर मिलने पर पीतर के नाम के आधार पर नामकरण किया जाता था, या बच्चे का नाम सप्ताह, महीना, मौसम आदि के आधार पर रखते थे।

सांस्कृतिक परिवर्तन

आधुनिक :- वर्तमान में प्रसव कार्य, प्रशिक्षित दाई या स्वास्थ्य कर्मियों के द्वारा कराया जाता है। गर्भकाल के 5वें महिने में काडा (गाय या भैस की पूंछ के बाल से निर्मित मोटा धागा) बांधने की प्रथा लगभग विलुप्त प्रायः हो गई है। प्रसव कार्य पारम्परागत के साथ—साथ प्रायः स्वास्थ्य कर्मियों के निगरानी में अस्पताल में कराया जाता है। प्रसव के बाद महिला को स्वस्थ्य रखने के लिए काढ़ा पारम्परिक तरिकों के साथ—साथ अस्पताल से मिली हुई दवा भी पिलायी जाती है। छट्टी में शुद्धीकरण का कार्य करने के लिए दादा या नाना द्वारा पारम्परिक तरीके से मुण्डन किया जाता है। कहीं—कहीं नाई—धोबी भी बुलाये जाते है। बच्चे का नामकरण पूर्वज के नाम सप्ताह, माह, मौसम के नाम के साथ वर्तमान में प्रचलित नाम भी रखने लगे है। धर्मातंरित लोग फादर, पास्टर के निर्देशानुसार जन्म संस्कार अपनी व्यवस्था अनुसार करते है।





कारण :- स्वास्थ्य सेवायें प्रत्येक गांवों तक पहुंच गई है। मितानिन, आंगनबाड़ी कार्यकर्त्ता एवं अन्य स्वास्थ्य कार्यकार्ताओं के द्वारा गर्भवती महिलाओं की समय—समय पर जांच व देखभाल के साथ दवाई भी उपलब्ध कराया जाता है। शासन के द्वारा अस्पताल में प्रसव कराने हेतु विभिन्न योजनाएं चलाई है। स्वास्थ्य के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ी है।

27

(2) विवाह संस्कार :-



पारम्परिक :- उरांव जनजाति के विवाह उम्र लड़को की 21 से 24 वर्ष तथा लड़कियों की 18 से 22 वर्ष उपयुक्त मानी जाती है। विवाह का प्रस्ताव लड़के वालों की ओर से लड़की वाले को दिया जाता है। वर पक्ष वधु के पिता को सुक दाम सवा पांच रूपये वधु मूल्य एवं चावल, दाल, साड़ी आदि देते हैं। विवाह की रस्म जाति के बुजूर्ग व्यक्तियों एवं पंचों की देख–रेख में सम्पन्न होता है। ईसाई उरावं में शादी के पूर्व 3 से 7 दिन तक चर्च में शिक्षा दी जाती है। विवाह रस्म चर्च में सम्पन्न होती है। उरांव लोगों में वधु मूल्य विवाह के अतिरिक्त, ढूकु, उढरिया, घर जमाई प्रथा, विधवा–परित्यक्ता का पुनर्विवाह को भी सामाजिक मान्यता है। ढूकु एवं उढरिया विवाह पर सामाजिक दण्ड का प्रावधान है। बाल विवाह का प्रचलन था। ग्राम धुमकुड़िया (युवा संस्कार गृह) का प्रचलन था। जहां अविवाहित लड़के लड़कियों में गृहस्थ जीवन के साथ अन्य नैतिक, व्यवहारिक, सामाजिक ज्ञान के साथ धार्मिक रीति रिवाजों व परम्पराओं की शिक्षा समाज के प्रमुखों, पहान/पुजारी आदि के द्वारा दिया जाता था। विवाह हेतु लड़का एवं लड़की का चयन माता–पिता व परिवार के अन्य सदस्यों के द्वारा विषम गोत्र में किया जाता था। विवाह कार्यक्रम परम्परागत तरीके से 3, 5, 7, 9 एवं 11 दिनों (आंगेर) का होता था। विवाह हेतु परम्परागत तरीके से मण्डप तैयार किया जाता था। वाद्य यंत्र भी परम्परागत तरीके के नगेरा (घसिया) बाजा बजाये जाते थे। बारात जाने के लिए तत्कालिन सुविधा अनुसार पैदल, घोड़ा, हाथी एवं बैलगाड़ी इत्यादि का उपयोग करते थे। वैवाहिक संबंध आस–पास ही किया जाता था। विवाह में सामुहिक सहभागिता से किया जाता है। पारम्परिक परिधान पहन कर विवाह करते थे। विवाह ममेरे–फुफूरे दूर के रिश्तेदारों के बच्चों के साथ की जाती थी। विवाह समाज प्रमुखों, पहान, पुजारी, पंचों के द्वारा सम्पन्न कराया जाता हैं। विवाह में दहेज की प्रथा नहीं हैं परन्तु वर–वधु को नये जीवन प्रारंभ करने हेतु उपहार या भेंट दिया जाता था। विवाह समय मेहमानों एवं सामाजिकजनों को पंगत पद्धति से भोजन कराया जाता था।



आधुनिक :- बाल विवाह प्रथा प्रायः खत्म हो गई है। पारम्परिक धुमकुड़िया (युवा संस्कार गृह) केन्द्रों में पारम्परिक संस्कार दिये जाते हैं। विवाह हेतु लड़का एवं लड़की का चयन माता पिता व परिवार के अन्य सदस्य के साथ–साथ स्वयं भी करने लगे हैं। वर्तमान में विवाह 3, 5, 7 एवं 9 दिन में करने लगे है। विवाह हेतु पारम्परिक मण्डप के साथ–साथ टेन्ट एवं अन्य आधुनिक सुविधाओं का उपयोग करने लगे हैं। विवाह के समय पारम्परिक घसिया बाजा के अलावा आधुनिक वाद्‌य यंत्रों, डी.जे., साउड सिस्टम आदि बजाने लगे है। वर्तमान बारात जाने के लिए चार पहिया वाहनों का उपयोग करने लगे है। वैवाहिक संबंध अब अधिक दूरी तक करने लगे है। वर–वधु विवाह के समय पारंम्परिक परिधान के साथ–साथ नये डिजाईन के परिधान पहनने लगे हैं। विवाह के लिए ममेरे–फूफेरे बच्चों को प्राथमिकता कम और दूर के लोगों को ज्यादा दी जाती है। विवाह समाज प्रमुखों, पहान/पुजारी, पंचों के साथ–साथ वर्तमान में कुछ परिवार ब्राम्हणों से ईसाई उरावं पादरियों एवं पास्टर से विवाह कराते हैं। विवाह में वर–वधु को उपहार देने का प्रचलन बढ़ गया है। विवाह में मेहमानों एवं सामाजिकजनों को पंगत पद्धति के साथ–साथ कुछ परिवारों के द्वारा स्वरूची भोज खिलाने का प्रचलन है।

कारण :- बाल विवाह करना दण्डनीय अपराध है, परसंस्‌तिकरण, आधुनिकीकरण, समय एवं धन के कारण, शिक्षित होने के कारण व धर्मांतरण के कारण।

(3) मृत्यु संस्कार :-

पारम्परिक :- मृत्यु उपरांत शव को परिवार के सदस्यों द्वारा उल्टे खाट/बांस के सीढ़ी नूमा ढांचे (बगई रस्सी से निर्मित) में लेटाकर श्मशान ले जाया जाता था। शव को दफनाने एवं परिस्थिति अनुसार अग्नि देने की प्रथा थी, शुद्धता हेतु मुण्डन, स्नान इत्यादि कर मृत्यु के पश्चात 9वें दिन गमी की जाती थी। जिसमें सामाजिकजनों/मेहमानों को मृत्यु भोज पंगत पद्धति से कराया जाता था।

आधुनिक :- वर्तमान में भी परंपरानुसार शव को बांस की सीढ़ी नुमा बांस की लकडी में लिटाकर श्मशान ले जाया जाता है। शव को दफनाने के साथ–साथ जलाया भी जाता है पश्चात स्नान हल्दी तेल लगाकरके ही घर में प्रवेश किया जाता है।

29

जलाने के पश्चात अस्थि विसर्जन नदी, नालों या पवित्र नदियों में की जाती है। मृत्यु के पश्चात 9वें दिन गमी की जाती है श्मसान घाट की पारंपरिक प्रक्रिया और मुण्डन, स्नान इत्यादि कर मृत्यु भोज पंगत पद्धति के अलावा स्वरूची भोज पद्धति से भी कराया जाने लगा है। कुछ धर्मांतरित लोग फादर पास्टर के निर्देशन में ईसाई संस्कृति अनुसार मृत्यु संस्कार संपन्न करते हैं।

कारण :- शव दफनाने हेतु भुखण्डों की कमी, शासन स्तर पर प्रत्येक ग्राम पंचायत दाह संस्कार करने के लिए मुक्तिधाम का निर्माण किया गया है।

राजनैतिक संगठन में सांस्कृतिक परिवर्तन :-

(1) रूढिगत पड़हा व्यवस्था :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति बाहुल्य क्षेत्रों में परम्परागत पड़हा पंचायत होती है। जो स्थानीय स्वशासन व्यवस्था है, जो स्थानीय समस्याओं, मारपीट, चोरी, वैवाहिक विवाद, अनैतिक संबंध, सम्पति का बटवारा आदि का निपटारा करती है। ग्राम के सरना पूजा, खरूज, हरोली, कठोरी, करमा पूजा आदि की भी व्यवस्था करती है। परम्परागत राजनैतिक संस्था पड़हा व्यवस्था है। जिसके पांच स्तर हैं :– 1. अतख़ा पड़हा (ग्राम पंचायत स्तर), 2. डाड़ा पड़हा (जनपद स्तर), 3. मूली पड़हा (जिला स्तर), 4. पादा पड़हा (राज्य स्तर), 5. राजी पड़हा (राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय स्तर)। प्रत्येक स्तर में अग्रलिखित पदाधिकारी होते हैं :– बेल, देवान, रकम उरबस, कहतो, कोटवार, पंच तथा सलाहाकार होते है, तथा पांच पड़हा पंचायत में एक करटहा/बईगा, एक चेंगना धरवा, एक पईन भरवा होते है। जिसमें से कोटवार, बईगा, चेंगना धरवा, पईन भरवा का कार्य करने वालों को पड़हा पंचायत द्वारा जीवन यापन हेतु जमीन प्रदान किया जाता है।



आधुनिक :- देश आजाद हुआ तब से हमारे देश में प्रजातांत्रिक संविधान एवं केन्द्र, राज्य शासन अस्तित्व में आये। अब वर्तमान में पारम्परिक जाति पंचायत के साथ–साथ थाना, न्यायालय, ग्राम पंचायत इत्यादि के माध्यम से भी समस्याओं का निपटारा किया जाता है। अपनी भागीदारी आधुनिक पंचायत की ओर बढ़ा रहे हैं। वे केवल मतदान में भाग नहीं ले

रहे हैं। अपितु सरपंच, वार्डपंच, जनपद सदस्य, जिला पंचायत सदस्य का चुनाव लड़ कर विजयी हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त कई सदस्य विधान सभा का चुनाव मं निर्वाचित हो रहे हैं।

कारण :- देश आजाद हुआ तब हमारे देश में प्रजातांत्रिक संविधान एवं सरकार की स्थापना की गई। प्रजातांत्रिक संविधान एवं सरकार का स्वरूप धर्म निरपेक्ष होता है। सभी धर्मो के संप्रदायों को संवैधानिक सुरक्षा प्रदान किया तथा सभी वर्ग के उत्थान के लिए प्रयास किये गये तथा जनजातीय लोगों के विशिष्ट एवं पारम्परिक व्यवस्था को संरक्षित करने हेतु संविधान में पांचवी—छठवीं अनुसूची के साथ अन्य अनुच्छेद दिये गये है।





धार्मिक जीवन में सांस्कृतिक परिवर्तन :-

परम्परागत :- उरांव जनजाति के परम्परागत धार्मिक विश्वास विविध रूपों में है। जीववाद, प्रकृतिवाद, टोटमवाद, पूर्वज पूजा सभी का सम्मिलन इनके धर्म में दिखाई देता है। परम्परागत उरांव जनजाति आदि धर्मावम्लबी हैं, जिन्हें कुछ लोगों द्वारा सरना धर्म भी कहा जाता है। इनके मुख्य देवता महादेव—पार्वती हैं। इसे धर्मेश भी कहते हैं। घर के मुख्य कमरे में अपने—अपने पितर और पुरखों को घर के मुखिया द्वारा पूजा किया जाता है। जिसमें परिवार के सभी सदस्य सम्मिलित रहते हैं। इसके अतिरिक्त धरती, सूर्य, चांद, तारे, नदी, पर्वत, वृक्ष आदि को भी देवता के रूप में मानकर पूजा

31

करते हैं। सामुहिक रूप से सरना स्थल पर पूजा किया जाता है। उरांव लोग पूजारी को बईगा/पहान कहते हैं। पहान हीं उरांवो के धार्मिक आयोजनो को सम्पन्न करता है। उरांव भूत–प्रेत, जादू–टोना में भी विश्वास करते हैं, और इनसे बचाव के लिए देवायेर/गुनिया का सहारा लेते हैं।

आधुनिक :- उरांव लोग अपने पारम्परिक रीति–रिवाज, संस्कार, संस्कृति, धर्म–कर्म का पालन करते हैं। भूत–प्रेत, जादू–टोना, तंत्र–मंत्र में कम विश्वास करने लगे है। ज्ञान विज्ञान एवं चिकित्सालयों के प्रचार–प्रसार के कारण इन विश्वासों में कमी देखने को मिल रही हैं, और लोग आधुनिक तरीकों का भी उपयोग कर रहे हैं। परन्तु कुछ लोगों द्वारा परसंस्कृतिग्रहण प्रक्रिया के कारण उनके जीवन पद्धति में धार्मिक परिवर्तन आए हैं। जिनमें कुछ ईसाइ धर्म को मानते है। वे फादर/पास्टर के बातों का अनुसरण कर गिरजाघर या चर्च में जाकर प्रार्थना करते हैं, और ईसाइ धर्म के व्यवस्था का पालन करते हैं। दूसरी तरफ कुछ लोग हिन्दू धर्म का पालन करते हैं।

कारण :- विज्ञान, शिक्षा, चिकित्सा सुविधाओं के प्रचार–प्रसार एवं परसंस्कृतिकरण के कारण।

धुमकुड़िया (उरांव युवा शिक्षा/संस्कार गृह) में सांस्कृतिक परिवर्तन :-

पारम्परिक :- उरांव लोगों का एकल शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक संस्था है, जिसको हिन्दी में युवा शिक्षा/संस्कार गृह कहा जा सकता हैं। इस संस्था के द्वारा उरांव जनजाति के कुंवारे लड़को को शिक्षा दी जाती थी। इसी युवा गृह में युवकों को सामाजिक एवं नैतिक शिक्षा दी जाती थी। युवा संस्कार गृह (धुमकुड़िया) के सदस्य का प्रवेश 10–11 वर्ष की अवस्था में होकर विवाह होने तक होती थी। अतः इन सब को अपने समाज के रीति–रिवाज एवं सामाजिक कर्तव्यों के पालन सांस्कृतिक परम्पराओं तथा धार्मिक अनुष्ठानों की शिक्षा यहीं दी जाती थी।

आधुनिक :- वर्तमान में भी धुमकुड़िया मुख्य केन्द्रों में संचालित हैं। जिसमें पूर्व व्यवस्थाओं एवं आधुनिक शिक्षा के साथ तालमेल बनाने का प्रयास किया जा रहा हैं। सामाजिक स्तर पर इसके विस्तार और प्रचार–प्रसार का प्रयास किया जा रहा है।

कारण :- आधुनिक शिक्षा व्यवस्था एवं कुछ युवक–युवतियों को पारम्परिक धुमकुड़िया की जानकारी का आभाव एवं धुमकुड़िया केन्द्रों की कमी।

लोक परम्पराओं में सांस्कृतिक परिवर्तन :-



लोक परम्पराएं ही जनजातियों को दूसरे समाज से अलग पहचान करवाती हैं। जनजातियों की लोक परम्पराएं उनके जीवन के प्रत्येक पहलुओं को प्रभावित करती हैं। इसके पीछे कई ऐतिहासिक, पौराणिक, कथाएं जुड़ी होती हैं। जिन्हें सामाजिक एवं धार्मिक मान्यता प्राप्त होती है। ये लोक परम्पराएं पीढ़ी दर पीढ़ि हस्तातंरित होती रहती हैं। लोक परम्पराओं से इनके जीवन में उत्साह एवं आनन्द का संचार होते है। प्राचीन समय में लोक परम्पराएं इनके मनोरंजन के साधन होते थे। उरांव जनजाति की लोकपरम्पराएं अनेक विधाओं में विद्यमान हैं। जो निम्न है।

(1) लोक पर्व/पूजा :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के प्रमुख लोक पर्व करम परब, टुन्टा, खद्दी परब (सरहुल) कोड़हा (कुण्डो), नवाखाई (तुसगो), सोहरई, गोसली पूजा, छेरता, फग्गू (फागुन), कठोरी, हरेली आदि प्रमुख था। सभी लोक पर्व को परम्परागत तरीके से घर के मुखिया, सियान, बईगा, पहान (पुजारी) की अगुवाई में पूजा कर मनाया जाता था। इन अवसरों में पारम्परिक वेशभूषा पहनते थे।



आधुनिक :- वर्तमान में भी उपरोक्त सभी लोक परब को पारंपरिक तरीके से बढचड़ कर मनाया जाता है। कुछ युवक–युवतियां घर से बाहर शिक्षा ग्रहण करने, नौकरी पेसा होने के कारण परम्परागत त्यौहारों की जानकारी नहीं रखते हैं। कुछ धर्मांतरित लोग अपने धर्म के व्यवस्था अनुसार अपने पर्व को मुख्य रूप से मनाते हैं।

कारण :- आधुनिक शिक्षा, धर्म परिवर्तन, परसंस्कृतिकरण के कारण ये अपने मूल त्यौहारों को अच्छे से जान नहीं पा रहे हैं।

33

(2) लोक गीत :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति के द्वारा विभिन्न लोक पर्वो के अवसरों पर अनेक प्रकार के लोग गीत गाये जाते थे। इसमें प्रमुख लोक गीत करम, डोमकेच, खद्दी (सरहुल) गीत, फुग्गू, टून्टा, मौसमी गीत आदि प्रमुख हैं। अधिकतर पुराने सयानी सयानों को लोग गीतों की जानकारी हैं। पुराने लोक गीतो में संदेश छुपी होती थी, जिसे लोग ध्यान से सुनते समझते थे। जिनमें ऐतिहासिक तथ्य भी होते हैं।

आधुनिक :- नयी पीढ़ीयों का अपने समाज में प्रचलित लोकगीतों के प्रति आकषर्ण का अभाव हैं। नयी पीढ़ीयां नागपुरी गाना, हिन्दी फिल्मी गीतों को ज्यादा सुनने लगे हैं। जो लोकगीत क्षेत्र में प्रचलित हैं वे भी बदले हुए रूपो मे पाया जाता है। विशेष अवसरों परब, पूजा जैसे अवसरों पर ही मूल लोक गीत सुनने को मिलते हैं।

कारण :- मनोरंजन के साधन बढ़ गये है। आधुनिकीकरण, गीत सुनने और देखने के लिए अन्य उपकरण आ गये है। वाद्ययंत्रों में बदलाव एवं फिल्मी गाने एवं एलबम का अत्यधिक प्रचार–प्रसार, समाज एवं परिवारों से दूरी होने के कारण।



(3) लोक नृत्य :-

पारम्परिक :- उरांव सदस्य विभिन्न अवसरों, पर्वो, विवाह आदि में करम नृत्य, खद्दी (सरहुल) नृत्य, विवाह नृत्य, डोमकेच नृत्य आदि करते हैं। परम्परागत बाजा मांदर, झांझ, घंट, नगेरा, डुला, टिमकी, सहनाई इत्यादि के ताल पर नृत्य करते हैं।

आधुनिक :- अब ये मांदर, झांझ, घंट, नगेरा, डुला, टिमकी, सहनाई इत्यादि के साथ ही डी.जे. एवं अन्य वाद्य यंत्रो का वादन करके नृत्य करने लगे हैं।

कारण :- आधुनिकीकरण, नये वाद्य यंत्र एवं साउण्ड सिस्टम।

(4) लोक कथाएं :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति में विशेषकर करमा परब, भाख काटने (मानीम खीरी/डण्डा कटना), फागुन, सरहुल की लोक कथाएं हैं।

आधुनिक :- उरांव जनजाति में प्रचलित लोक कथा का प्रचार–प्रसार कम हैं जिसके कारण नये पीढ़ीयों को इनका ज्ञान पर्याप्त नहीं है।



35

कारण :- आधुनिक शिक्षा पद्धति, मनोरंजन के अन्य साधनो के कारण नये पीढ़ी लोक कथाओं में ध्यान नहीं देते हैं। अभिभावक लोक कथाओं का हस्तांतरण नहीं कर पा रहे हैं।

(5) बोली :-

पारम्परिक :- उरांव जनजाति की अपनी जाति बोली कुडुख़ है। ये आपस में संवाद के लिए कुडूख़ बोली का प्रयोग करते थे।

आधुनिक :- नयी उरांव पीढ़ी के लोग अपनी बोली का प्रयोग अपने लोगों के बीच में करते हैं। जो इनकी पहचान है। कुछ लोग बाहरी लोगों के सम्पर्क में होने के कारण कुडुख़ भाषा का उपयोग कम करते हैं।

कारण :- शिक्षा पद्धति में अन्य भाषाओं में अध्ययन कराने के कारण या परिवार के जानकार सदस्यों द्वारा नहीं सिखाने के कारण ऐसी स्थिति बन रही है।

उपसंहार :– परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है, समय एवं आवश्यकता अनुरूप सभी समाजो में परिवर्तन होता रहता है। समाज उन परिवर्तनों को धीरे–धीरे स्वीकार कर के हमेशा उन्नति की ओर अग्रसर होने का प्रयास करता है। उरांव जनजाति में भी समय व आवश्यकता के अनुरूप सांस्कृतिक कुछ परिवर्तन दिखाई देता है।





संचालनालय, आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान

सेक्टर 24, नवा रायपुर अटल नगर, छत्तीसगढ़

Website: cgtrti.gov.in, E-mail: trti.cg@nic.in

Phone: 0771-2960530, Fax: 0771-2960531